Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
UGC Approved Journal No. 63726
Impact Factor:4.081
Volume-12, Issue-4, March-2019 www.researchguru.net

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में 'नई तालीम' का प्रयोगः जन–लामबंदी के रूप में

ब्रजेन्द्र कुमार
शोधार्थी– इतिहास विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.) ई–मेल–इतपरमदकतंउमक14/हउंपसण्बवउ मो. न.– 09005564696

साराँश

17वीं शताब्दी में हिन्दुस्तान में उपनिवेशवाद की जो प्रक्रिया शुरू हुई, उसने उन्नीसवीं सदी में साम्राज्यवाद का रूप धारण करके देश में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक रूपान्तरण से भौतिक तथा मानवीय परिवेश को गहराई तक प्रभावित किया। नई शिक्षा के द्वारा उन्होंने देश में अपने साम्राज्य के शुभचिंतकों एवं संरक्षकों को तैयार कर, देश में एक ऐसा परिवेश तैयार किया ताकि लोगों में असमानता की भावना को पैदा किया जा सके। इसके लिए नये तत्वों की पहचान की गई, जिनमें पश्चिमीकरण तथा आधुनिकता को जोड़ा गया। आधुनिकता का एक तत्व लोकतांत्रिक जीवन पद्धति का विकास जो कि पश्चिम के द्वारा 'पूर्वी निरंकुशता' गढ़कर पूर्व के लोगों को आधुनिक लोकतान्त्रिक संस्थाओं की जानकारी तथा प्रशिक्षण देने के लिए भारत में 'स्थानीय निकायों' का विकास किया गया, ताकि 'राज्य' को एक बड़े उत्तरदायित्व से मुक्त रखा जाये। इस काम को ब्रिटिशराज में आधुनिक शिक्षा प्रणाली का विकास करके बखूबी किया गया। गाँधी ने देश में इस नये परिवेश में जिसमें सामाजिक संबंधों में तनाव उत्पन्न हो रहे थे, को पहचान कर एक नया प्रयोग, जो कि वो पहले कर चुके थे।उसी को राष्ट्रीय रूप देने के लिए 1937 में 'नई तालीम' को वर्धा में एक सम्मेलन आयोजित करके किया। 'नई तालीम' में गाँधी ने शिक्षा को उत्पादक कार्यो से जोड़कर, स्थानीय सामुदायिक सहभागिता को सुनिश्चित किया और उसका प्रयोग राष्ट्रीय भावना को विकसित करके स्वतंत्रता आंदोलन को प्रभावी बनाने में एक नये अस्त्र के रूप में किया। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान जब अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त वर्ग और आम जन के बीच में एक बड़ी खाई को देखा गया तब आंदोलन को तीव्रता प्रदान करने के लिए आपसी सामंजस्य और एकता की जरूरत महसूस की गई। ये कार्य नई तालीम को ला कर आम जनता को राष्ट्रीय आंदोलन के लिए संगठित किया गया। आज वैश्वीकरण के दौर में जब शिक्षा के उद्देश्य ही बदल गए हैं और समाज में एक गहरी खाई बढ़ती जा रही है उस दौर में 'नई तालीम' का प्रयोग लोगों में विश्वास तथा उत्साहवर्धन कर सकता है, साथ ही शैक्षिक विकास के प्रति स्थानीय लोगों को लामबंद करके सामुदायिक सहभागिता को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

कुँजी शब्द– *नई तालीम, सामुदायिक सहभागिता, हस्तशिल्प, अन्तर्विषयक, मातृभाषा, जनलामबंदी आदि।*

औपनिवेशिक भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी की सरकार द्वारा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु, जिस आधुनिक शिक्षा प्रणाली की शुरूआत नीतिगत रूप में की गई थी। उस शिक्षा प्रणाली ने भारत में इस प्रकार के सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक रूपान्तरण को जन्म दिया, जिससे परम्परागत संस्थाओं और प्रारूपों के विखण्डन की एक प्रकिया प्रारम्भ हुई। इस प्रकिया के तहत आधुनिक शिक्षा की पहुँच जिन हाथों तक हो सकी उन हाथों को उसने एक ऐसे वर्ग के रूप में परिणत कर दिया जो एक नये शासक वर्ग का अनुसरणकर्ता होता जा रहा था। इन नीतियों के कारण देश में वि–औद्योगिकीकरण की प्रकिया प्रारम्भ हुई, जिससे हस्तशिल्प से जुड़ा हुआ वर्ग बेरोजगार होता गया तथा यूरोपीय माल ने भारतीय बाजारों पर कब्जा करके देश को औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के रूप में परिणत कर दिया था। इन सबसे बचने के लिए जरूरी था की समाज में एक इस तरह के विचार को बढ़ावा दिया जाये जिससे अपने परम्परागत काम की महत्ता को बढ़ाकर सम्मानजनक स्थिति प्रदान की जा सके। यह काम शिक्षा के द्वारा बेहतर रूप से किया जा सकता था।

अतः देश में एक नयी शिक्षा व्यवस्था की पुर्नरचना आवश्यक समझी गई, जिसके द्वारा भारतीयों में स्वावलम्बन एवं आत्मनिर्भरता को विकसित करके उन्हें राष्ट्रीय आंदोलन के साथ जोड़ा जा सके। इसी उद्देश्य के साथ राष्ट्रवादियों ने मोहनदास कर्मचंद गाँधी के शैक्षिक विचारों पर आधारित 'नई तालीम' को अपनाने पर सहमति व्यक्त की। गाँधी का मानना था कि औपनिवेशिक शासन ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बर्बाद करके इसे शहराती लोगों के शोषण का जरिया बना दिया है। अतः वह ग्रामीण जीवन की आर्थिक स्वायत्तता और उसकी राजनीतिक गरिमा को पुनर्स्थापित करना चाहिते थे। नई तालीम से वे बच्चों को उत्पादक कार्य में प्रशिक्षित करते हुए और सहकारी समुदाय के रूप में जीवनयापन के उपयुक्त सिद्ध होने वाले नजरियों और मूल्यों से उन्हें भरपूर करते हुए गाँव को इस दिशा में विकसित करना चाहते थे। गाँधी ने 'हिंद स्वराज' में शिक्षा के बारे में लिखा कि ''सभ्यता के रोग ने हमें इतना बुरी तरह से जकड़ लिया है, कि अंग्रेजी बिल्कुल ही न पढ़ने से हमारा काम चले, ऐसा समय नहीं रहा।'' अतः जो लोग अंग्रेजी पढ़ चुके हैं वे उस शिक्षा का सदुपयोग करें जिन्होंने अंग्रेजी पढ़ ली है उन्हें चाहिए कि अपने बच्चों को पहले सदाचार और अपनी भाषा सिखयें। फिर हिन्दुस्तान की दूसरी भाषा सिखायें।[1] एक प्रकार से गाँधी यह महसूस कर चुके थे कि समाज में जो खाई पैदा हो चुकी है, उसे पाटने के लिए जरूरी है कि मातृभाषाओं को महत्व

देना आवश्यक है। मातृभाषाओं को अपना कर ही कोई भी समाज अपने स्वयं के ज्ञान का सृजन कर अपने स्वाभिमान को प्रकट कर सकता है।

ब्रिटिशकालीन भारत में एक लम्बे स्वतन्त्रता संघर्ष के बाद जब कांग्रेस मंत्रिमण्डलों ने 1937 ई. में सात प्राँतों में सत्ता संभाली तो उन्हें दुविधा का सामना करना पड़ा। एक ओर जनता जोर देकर यह मांग कर रही थी, कि शीघ्रतातिशीघ्र सार्वजनीन निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा आरम्भ की जाए। इसको पूरा करने के लिए बजट में भारी धनराशि की दुविधा थी। इस दुविधा से निकलने का रास्ता गाँधी ने एक प्रस्ताव रखकर निकाला कि यदि एक उपयोगी और उत्पादक शिल्प के द्वारा शिक्षा देकर पढ़ाई की प्रक्रिया को आत्म–निर्भर बनाया जा सके तो प्रत्येक बालक को सात वर्ष सार्वजनीन, अनिवार्य और निःशुल्क शिक्षा दी जा सकती है।[2] ब्रिटिशकालीन भारत में गोपाल कृष्ण गोखले 1910 ई. में अनिवार्य और मुफ्त प्राथमिक शिक्षा के लिए केन्द्रीय विधान सभा में व्यक्तिगत बिल पेश किया था जिसे सरकार ने वित्तीय कमी का हवाला देते हुए मानने से इंकार कर दिया था। अतः अब एक नई शिक्षा व्यवस्था को अपनाने के लिए आवश्यक था कि वित्तीय आत्मनिर्भरता का रास्ता ढूढ़ा जाए। इसीलिए नई तालीम को आत्मनिर्भरता पर आधारित करने की कोशिश की गई।

गाँधी ने वर्धा प्रस्ताव में कहा कि ''मुझे आपके सामने दो बातें रखनी हैं– एक प्राथमिक शिक्षा के बारे में और दूसरी उच्च शिक्षा यानी हाई स्कूल और कॉलेज की शिक्षा के बारे में मैं इस ख्याल का हूँ कि प्राथमिक और माध्यमिक दोनों शिक्षाओं को मिला दिया जाय। वजह यह है कि प्राथमिक शिक्षा की जो शक्ल आज है, उसे मैंने गाँव में देखा है। अगर हम देहातों को कुछ देना चाहते हैं तो जरूरी है कि सेकण्डरी तालीम को प्राइमरी के साथ मिला दिया जाए। इसलिये हमने जो कुछ बनाया है या बनाने जा रहे है, वह शहरों के लिये नहीं, बल्कि पूरा–पूरा गाँवों के लिए है।[3] गाँधी आधुनिक शिक्षा की आलोचना करते हुए उसे गाँव वालों के लिये लाभप्रद नहीं मानते हैं। शिक्षा के स्वरूप के विषय में उनका मत था कि ''किसी उद्योग या दस्तकारी को बीच में रखकर उसके जरिये ही यह सारी शिक्षा दी जानी चाहिये ताकि उनके मस्तिष्क को प्रशिक्षित किया जा सके।''[4] यह शिक्षा की दिशा में एक ऐसा प्रयास किया जा रहा था, जहाँ अंग्रेजी शिक्षा अपनी विश्वसनीयता खोती जा रही थी। अतः शिक्षा को लोकप्रिय बनाने के लिए गाँधी तकली के जरिये उसके उपयोग तथा तकनीकि एवं गणित को खेल–खेल में सिखाने के पक्ष में थे, ताकि सीखने वाले पर जरा भी बोझ न पड़े। गाँधी ने अपनी शिक्षा योजना में 7 वर्ष का पाठ्यक्रम रखा। इसमें दस्तकारी के जरिये उत्पादित माल से विद्यालय का खर्च निकल आएगा और विद्यालयों को सरकार के ऊपर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा। प्राथमिक शिक्षा की इस योजना में वे सफाई, आरोग्य और आहार के प्रारम्भिक सिद्धांतों को भी शामिल करते हैं। शिक्षा को वे काम से जोड़कर उन्हें राष्ट्रीयता का बोध कराने की बात भी करते हैं। इसके लिए वे इटली में मुसोलिनी द्वारा राष्ट्रसेवा के लिए नौजवानों को तैयार करने का उदाहरण प्रस्तुत करते है।[5] शिक्षा को जीवन से जोड़ कर स्थानीय समस्याओं हेतु संवेदनशीलता विकसित करने की दिशा में उठाए गए कदम थे।

गाँधी द्वारा प्रस्तावित योजना के विषय में डॉ. जाकिर हुसैन ने कहा कि ''बच्चों को अच्छी और सच्ची तालीम तभी दी जा सकती है, जबकि वे जो सीखें कुछ करके सीखें। बचपन में कोई 13 वर्ष की उम्र तक बच्चे सब यही चाहते हैं कि कुछ करें, बनायें, बिगाड़ें, तोड़ें और जोड़ें। कुदरत ने उन्हें सीखने–समझने का यही रास्ता दिखाया है। उन्हें किताबें देकर एक जगह बिठा देना उनके साथ हिंसा करना है।''[6] देश में सरकार द्वारा शिक्षा का एक जो नया प्रारूप तैयार किया गया था, वो पुस्तकों पर आधारित था और कहीं ना कहीं समाज में वंचना का प्रसार कर रहा था। भारत में शताब्दियों से शैक्षिक पाठ्यक्रम केवल वर्चस्व रखने वाली जातियों से संबंधित ज्ञान तक सीमित रहा था। बुनियादी शिक्षा उस ज्ञान के लिए जगह बनाने का प्रस्ताव रख रही थी जिसका संबंध निचली जातियों से था, जिनमें सबसे निचली जातियां भी शामिल थी। एक वास्तविक बुनियादी स्कूल के बच्चों से यह अपेक्षा रखी गई थी कि वे शौचालयों की सफाई करेंगे। बुनियादी शिक्षा के कारगर ढंग से लागू होने पर हमारे जाति व्यवस्था वाले समाज में ज्ञान पर अलग–अलग तबकों के एकाधिकार के वरीयता क्रम में जबरदस्त उलटफेर हो जाता। सच्चे ढंग से काम कर रहे बुनियादी स्कूल खेल यानी कामन स्कूल ही हो सकते थे और इन स्कूलों में ऊंची जातियों की सांस्कृतिक पूंजी को सभी बच्चों के लिए उपयुक्त स्कूली ज्ञान के रूप में पूरी तौर पर मान्यता नहीं मिल सकती थी।[7] आधुनिक शिक्षा व्यवस्था की ओर ध्यान खींचते हुए डॉ. जाकिर हुसैन कहते हैं कि ''मदरसों (विद्यालय)की बुराइयों में सबसे बड़ी चीज परीक्षाओं का डर है। शिक्षकों की तरक्की परीक्षाओं में बच्चों के पास होने पर होती है। शिक्षक उन्हें दिन–रात रटाकर पहले दर्जे में पास कराने की फिक्र करते रहते हैं और बच्चों को हमेशा के लिए तबाह करके अपना काम बनाते हैं।''[8] नई तालीम में शिक्षकों को शिक्षा और समाज से सम्बन्ध रखने वाले नये सिद्धांतों और विचारों की समझ तथा व्यवहार में लाकर अपने आपको समाज के साथ स्थानीय सामंजस्य तथा पर्यावरणीय जानकारियों के साथ आत्मसात् करने के रूप में देखा गया है। शिक्षकों को शिक्षण विधि के रूप में अन्तर्विषयक शिक्षण विधि जिसे शिक्षा मनोविज्ञान में शिक्षा का स्थानान्तरण भी कहा गया है को अपनाने

पर बल दिया है, ताकि ''बच्चों में आगे बढ़ने की स्वाभाविक प्रवृत्ति चलती रहे।[9] के.जी. सैय्यदैन के अनुसार ''गाँधी जी शिक्षाविदों से मुख्यतः यही कहते थे, कि भारतीय परिस्थितियों को देखते हुए आप वास्तविकता के आधार पर अपना मत या विचार स्थिर करें तथा इस बात का ध्यान रखें कि मानव जाति का नैतिक दृष्टि से क्या कर्तव्य है।''[10] कहीं ना कहीं यह ऐसा था जिसमें आर्थिक रूप से शोषित हुए समाज में आशा की किरण बिखेरने जैसा था, जहाँ उपेक्षित वर्ग में एक नई उमंग का संचार करने की कोशिश की गई थी।

वर्धा सम्मेलन में 23 अक्टूबर, 1937 ई. में सम्मेलन के प्रस्तावों को सामने रखकर बुनियादी शिक्षा की एक योजना तैयार करने के लिए एक समिति डॉ. जाकिर हुसैन के सभापतित्व में बनायी गई थी। इस समिति के सदस्यों में थे– ख्वाजा गुलाम सैयदेन, खुशाल तलफशी शाह, काका साहब कालेलकर, किशोरलाल मशरूवाला, जे.सी कुमारप्प, श्री कृष्णदास जाजू, श्रीमती आशादेवी तथा आर्यनायक आदि। समिति ने अपनी रिपोर्ट को पेश करते हुए मौजूदा शिक्षा को देश के लिए अनुपयोगी मानते हुए उसे बदलकर एक ऐसा नया तरीका रचने की बात की कही है जिसमें नई रचना करने की ताकत हो और जिसकी नींव मनुष्यों की हमदर्दी, आदर्शो और जरूरतों से अधिक घुली–मिली हो और जो मौजूदा जरूरी मांगों को अधिक अच्छी तरह पूरा कर सकता हो साथ ही हमारे बच्चों को यह सिखाने की जरूरत है कि अहिंसा का तरीका हिंसा से अच्छा है।[11] डॉ. जाकिर हुसैन ने अपनी रिपोर्ट में विचार व्यक्त किया है कि ''नये हिन्दुस्तान के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन में लोकतंत्र का रंग दिनपर दिन बढ़ता जाएगा। इसलिए आने वाली पीढ़ी के लिए यह जरूरी है कि उसे अपने मसलों को अपने हक को और अपने विद्यालयों की शैक्षिक गतिविधियों को समझने का मौका मिले। यह कार्य नई तालीम के द्वारा किया जा सकता है। इस शिक्षा की नींव सहयोग पर आधारित होगी और बालक में यह काम बिना बोझ के लड़कपन के आधार पर किया जा सकता है।[12] नई तालीम के द्वारा सामुदायिक सहभागिता को सुनिश्चित करके समाजिक एकता को स्थापित करने का प्रयत्न किया किया गया था।

नई तालीम का जो दर्शन गाँधी ने दिया, उन पर जॉन रस्किन की पुस्तक 'अनटु दिस लास्ट' की जिन बातों का प्रभाव दिखायी पड़ता है। ये हैं पहला– एक अच्छे अर्थतंत्र का मकसद सभी की भलाई करना होता है। दूसरा– शारीरिक काम का उतना ही मूल्य होता है, जितना मानसिक काम का तथा तीसरा– जीने योग्य जीवन किसी मजदूर अथवा किसी दस्तकार का होता है। इन्हीं संदेशों से प्रेरणा लेकर गाँधी ने 1904 ई. में फिनिक्स फार्म तथा 1910 ई. में टॉल्स्टॉय फार्म चालू किये थे। इनके द्वारा प्राप्त अनुभवों ने गांधी के दृष्टिकोण को और ज्यादा मजबूती प्रदान की।[13] आचार्य परमेश के अनुसार ''गाँधी ने ग्राम आधारित अर्थतंत्र और कार्य–आधारित शिक्षा की कल्पना की, गाँधी के लिए शिक्षा वास्तव में उनके सम्पूर्ण राजनीतिक कार्यक्रम का हिस्सा थी। गाँधी का विश्वास था कि राजनीति एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य मानव मूल्यों को मुक्त करना होना चाहिए।''[14] नई तालीम के द्वारा ग्रामीण समाज को मुख्य धारा में लाकर उसे राष्ट्रीय आंदोलन के साथ जोड़ने की कोशिश की गई थी।

1920 ई. में यंग इण्डिया में गांधी ने लिखा कि उनकी कल्पना की शिक्षा ''तीन उद्देश्य पूरा करेगी शिक्षा को आत्म–निर्भर बनाना, बच्चों के शरीर एवं दिमाग दोनों का काम ही विकास करना और विदेशी धागे और कपड़ों के पूर्ण बहिष्कार का रास्ता खोलना इस प्रकार बच्चों को आत्मनिर्भर एवं स्वतंत्र बनाने के लिए तैयार करना।''[15] गाँधी ने लिखा ''मेरी योजना है कि धागा बुनने और कार्डिंग, इत्यादि जैसे ग्रामीण हस्तशिल्प के जरिये प्राइमरी शिक्षा प्रदान की जाए और उन्हें दूरगामी शांत सामाजिक क्रांति का मुख्य जरिया बनाया जाए जिसके गहरे नतीजे होंगे।''[16] वर्धा सम्मेलन में जाकिर हुसैन ने अपने भाषण में शंका प्रकट की कि ''इसके फलस्वरूप शिक्षक गुलाम होने वाले लोग बन जाएंगे ओर गरीब लड़कों की मेहनत का शोषण करेंगें। यदि ऐसा हुआ तो तकली किताबों से भी बुरी साबित होंगी। और हम अपने देश में एक छिपी हुई गुलामी की व्यवस्था के आधार के निर्माण में लग जाएंगे।''[17] गाँधी का मानना था कि हमारे जैसे गरीब देश में किताबें सोच समझकर ही रखवानी चाहिए और उनकी संख्या कम हो अन्यथा गरीब बच्चे पढ़ाई से वंचित हो जाएगे। उनका मानना था कि मातृभाषा उच्चतम स्तर तक पढ़ाई का माध्यम होनी चाहिए। वे माध्यम या अनिवार्य विषय के रूप में अंग्रेजी के दृढ़ विरोधी थे। वे लिखते हैं ''भारत में जितने अंधविश्वास है उनमें सबसे बड़ा यह है कि आजादी के विचार और सही विचार अपनाने के लिए अंग्रेजी भाषा का ज्ञान निहायत जरूरी है।''[18] अंग्रेजी शिक्षा के कारण समाज में शिक्षा को लेकर जो नकारात्मक अवधारण व्याप्त हो चुकी थी उससे उबारने का मातृभाषा को अपनाना एक बेहतर तरीका था। यदि हम राष्ट्रीय आत्म–हत्या नहीं करना चाहते हैं तो अंग्रेजी को विचारों का माध्यम नहीं बनाया जाना चाहिए। गाँधी का माना था कि ''यदि अंग्रेजी में न सोचना होता और अंग्रेजी में अपने विचार न प्रकट करने पड़ते तो राममोहन राय अधिक बड़े सुधारक होते और लोकमान्य तिलक अधिक बड़े विद्वान। इसमें शक नहीं उन दोनों ने अंग्रेजी साहित्य की विपुल राशि से काफी ज्ञान हासिल किया लेकिन यह ज्ञान उन्हें अपनी मातृभाषाओं में मिलना चाहिए था।

कोई भी देश अनुवादक पैदा कर राष्ट्र नही बन सकता।[19] भारत का एक राष्ट्र के रूप में निर्माण करने के लिए आवश्यक था कि ऐसे ज्ञान का उत्पादन किया जाए जो देश की सामाजिक तथा सांस्कृतिक विविधता को संरक्षित कर सके।

गाँधी ने बुनियादी शिक्षा का जो प्रस्ताव रखा था वह इस बात का एक और उदाहरण है कि स्कूली पाठ्यक्रम पर ज्ञान के समाजशास्त्र का असर कितना महत्वपूर्ण है? गाँधी के प्रस्ताव का एक अहम पहलू यह था कि स्कूल में स्थानीय दस्तकारियों और उत्पादनशील कौशल को लागू किया जाए। व्यवहार के स्तर पर उनका विचार था कि स्कूल को स्थानीय परिवेश में होने वाली उत्पादन की प्रक्रिया से जोड़ा जाए और इसका घोषित लक्ष्य खुद स्कूल को एक उत्पादनशील संस्था बनाना हो।[20] गाँधी यह सोचते थे कि यदि प्राथमिक स्कूल अपनी जरूरत की अधिकांश चीजों का उत्पादन खुद नहीं कर सकता तो वह एक गरीब समाज में बहुत कारगर नहीं हो सकता तथा उससे स्थानीयता को महत्व प्राप्त नहीं होगा परिणामस्वरूप स्थानीय विकास अवरुद्ध होगा। अतः एकसमान विकास के लिए यह आवश्यक था कि विद्यालय तथा पाठ्यक्रम को स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल रखा जाए।

नई तालीम को अस्वीकार करते हुए मुल्क राज आनन्द लिखते हैं कि ''अच्छे नन्हें मस्तिष्कों को खादी और अहिंसा के आधार पर पूर्णता तक पहुँचाने का सपना, ताकि ये अतिमंद अपने आत्म–निर्भर समुदायों की सीमाओं में साग–पात की तरह बढ़ते रहें एक ऐसे भारत में जहाँ हर गाँव पहले से ही विदेशी और देशी पूँजीपातियों द्वारा मशीन से बने सस्ते सामानों से भरा पड़ा है न सिर्फ असंभव है, बल्कि इससे उन गुणों के ठीक उल्टे गुण ही उनमें आने की संभावना बनेगी जिन्हें औसत भारतीय में पैदा करने की कोशिश में महात्मा लगे हुए है।''[21] गाँधी की औपनिवेशिक शिक्षा की आलोचना पश्चिमी सभ्यता की समग्र आलोचना का एक अंग थी। पश्चिमी सभ्यता गाँधी के लिए उलझी–पुलझी हालत में था लिहाजा यह प्रगति का या ऐसी किसी अन्य चीज का प्रतीक हो ही नहीं सकती थी, जिसकी भारत में नकल की जाए या जिसकी जड़े भारत में रोपी जाए। भारत में पुननिर्मित शिक्षा विकास के एक ऐसे वैकल्पिक रूप की ओर बढ़े जो इसकी अपनी प्रकृति भौगोलिक और सांस्कृतिक जरूरतों से ज्यादा यह मॉडल संसार के लिए था।[22] गाँधी ने शिक्षा की जो आदर्शवादी योजना पेश की वह उनकी निडरता का दृष्टिकोण था और हो भी क्यों नहीं क्योंकि शिक्षा का उद्देश्य 'भय' को खत्म करके बच्चों को निडर बनाना होता है। गाँधी को यह भय नहीं था कि शिक्षकों द्वारा इस शिक्षा योजना का किस प्रकार से इस्तेमाल किया जा सकता है? उनकी नजर में शिक्षक एक आदर्श व्यक्ति था। गाँधी का मानना था कि जो सत्य धर्मो में साझा है उन्हें सभी बच्चों को पढ़ाया जा सकता है और पढ़ाया जाना चाहिए। ये सत्य शब्दों के जरिए या किताबों के जरिए नहीं पढ़ाए जा सकतेहै। बच्चे इन सत्यों को केवल शिक्षक के दैनिक जीवन के जरिए ही सीख सकते है। यदि शिक्षक स्वयं सत्य और न्याय के आदर्शों के अनुरूप जीता है, तभी बच्चे इस बात को सीख सकते है कि सत्य और न्याय सभी धर्मो के आधार हैं।[23] हमारी शिक्षा व्यवस्था ने तर्क और विवेक की भाषा को पहचानने तथा लोकप्रिय बनाने की कोशिश नहीं की, सत्य को ढूँढ़ने और उसे ढँढ़कर दूसरों को दिखाने के लिए भाषा की शिक्षा न हमारी पाठशालाओं में दी जा रही है, न हमारे विश्वविद्यालयों में बल्कि इसकी जगह इनमें एक प्रतिस्पर्धापरक होड़ को विकसित किया जा रहा है, जो कि सत्य से, जीवन से, अपने समाज के यर्थाथ से, अपने परिवेश और पर्यावरण से जी चुराना सिखाती है। इनसे जुड़ना ओर जूझना नहीं सिखाती और न ही जीवन में स्थायित्व लाती है।[24]

सुमित सरकार के अनुसार ''कांग्रेसी शासन वाले प्रांतों में बेसिक शिक्षा प्रदान करने के लिए थोड़ी सी सहायता से विद्यालय स्थापित किए गए। इस पद्धति में सादगी, मानसिक एवं शारीरिक श्रम के बीच के भेद को कम करने और अपने उत्पादों के माध्यम से विद्यालयों के आत्मनिर्भर होने के रोचक आदर्शो का समावेश तो था, किन्तु शिक्षा कभी पारंपरिक स्कूलों और कॉलेजों का वास्तविक विकल्प नहीं बन सकी और कुटीर उद्योगों को शिक्षा से जोड़ने की बात अनेक लोगों को अव्यावहारिक एवं गाँधीवादी सनक प्रतीत हुई।''[25] पाठ्य पुस्तकों के अनिवार्य उपयोग और शिक्षक की कमजोर स्थिति के बीच के रिस्ते को प्रदर्शित करते हुए गाँधी ने हरिजन में प्रकाशित अपने लेख में लिखा था कि ''यदि पाठ्य पुस्तकों को शिक्षा की गाड़ी के रूप में बरता जाता है तो शिक्षक के जीवित शब्द की भूमिका का मूल्य बहुत मामूली ही रहेगा। एक शिक्षक जो पाठ्य पुस्तकों से पढ़ाता है, अपने शिष्यों तक मौलिकता को पहुँचा ही नहीं सकता। कृष्ण कुमार का मानना है कि बुनियादी शिक्षा उस ज्ञान के लिए जगह बनाने का प्रस्ताव रख रही थी जिसका संबंध निचली जातियों से था। शताब्दियों से पाठ्यक्रम केवल वर्चस्व रखने वाली जातियों से संबंधित ज्ञान तक सीमित था। बुनियादी शिक्षा के कारगर ढंग से लागू होने पर हमारे जाति व्यवस्था वाले समाज में ज्ञान पर अलग–अलग तबकों के एकाधिकार के वरीयता क्रम में जबरदस्त उलटफेर हो जाता।[26] नई तालीम के द्वारा समाज में जो जड़ता थी, उसे तोड़कर एक नए ताने–बाने को बुनने की कोशिश की गई थी।

निष्कर्षः

बुनियादी शिक्षा योजना की प्रासंगिकता वर्तमान वैश्वीकरण के दौर में तब महत्वपूर्ण हो जाती है जब शिक्षा एक रोजगार के उद्देश्य तक सिमट कर रह गयी है। इस स्थिति में नई तालीम में नागरिकों को स्वावलम्बी बनाने की शिक्षा पद्धति अपनी सार्थकाता को सिद्ध करती है। इस योजना द्वारा शिक्षा को लोगों की प्रकृति की अनुकूलता और कम समय में सारी जनता में शिक्षा के प्रसार को सुनिश्चित करना स्पष्ट करता है, कि योजना में स्थानीय सहभागिता के द्वारा शिक्षा के विकास को दिशा प्रदान की करने का उद्देश्य था। बुनियादी शिक्षा योजना को भी वे शिक्षक के द्वारा उसका उपयोग एक 'नयी गुलामी' के रूप में देखते है, क्योंकि शिक्षा के द्वारा शिक्षक शोषणकारी अस्त्र–शस्त्रों का उपयोग बहुत शानदार तरीके से करना सीख लेता है और वह अपनी अन्तरात्मा की आवाज को भी खत्म कर लेता है, इसे 'अदृश्य हिंसा' के रूप में पहचाना जा सकता है। एक प्रकार से यह कहा जा सकता है कि देश में राष्ट्रीय आन्दोलन को गति देने के लिए समाज में लोगों को एकजुट करना आवश्यक था। इसके लिए यह जरूरी था कि किसी एक ऐसे अस्त्र का प्रयोग किया जाए, जिससे आम जनता को लामबन्द किया जा सके। इस कार्य के लिए गाँधी ने नई तालीम को चुना। नई तालीम जो कि भारत में राष्ट्रवादियों का एक रचनात्मक प्रयोग था, के द्वारा लोगों को उनके कार्य की महत्ता का आदर्श रचकर समाज में जो आधुनिक शिक्षा पाकर एक नकारा वर्ग पैदा हो रहा था उस वर्ग के अन्दर सामाजिक संवेदनाएँ जगाने और एक नया राष्ट्रीय आदर्श उत्पन्न करने के लिए नई तालीम को लाया गया। अतः नई तालीम के द्वारा जो एक बड़ा समुदाय शिक्षा से वंचित था, को सहभागी की भूमिका में देखा गया और उसकी सामुदायिक सहभागिता को बढ़ाया गया। जिससे राष्ट्रीय आन्दोलन में समाज की जनलामबंदीकरण को बखूबी अंजाम दिया गया। नई तालीम योजना की प्रासंगिकता तब और बढ़ जाती है जब शिक्षा रोजगार के उद्देश्य तक सिमट कर रह गयी हो, इस स्थिति में नई तालीम में नागरिकों को स्वावलम्बी बनाने की शिक्षा पद्धति अपनी सार्थकता को सिद्ध करती है। इस योजना के द्वारा स्थानीय सहभागिता के आधार पर शैक्षिक विकास का मार्ग चुना गया था।

संदर्भ ग्रन्थ–

1. गांधी, मोहनदास करमचंद, हिन्द.स्वराज, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृ. 82.
2. नायक, जे.पी. और सैयद नुरल्ला, भारतीय शिक्षा का इतिहास, मैक्मिलन कंपनी, नई दिल्ली, 1976, पृ. 337.
3. बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा, वर्धा शिक्षा परिषद्, 1937 और जाकिर हुसैन समिति का विवरण, हिन्दुस्तानी तालीमी संघ, सेवाग्राम, वर्धा, 1957, पृ. 6.
4. वही, पृ. 6.7.
5. वही, पृ. 15.
6. वही, पृ. 19.
7. कुमार, कृष्ण, शैक्षिक ज्ञान और वर्चस्व, ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, 2013, पृ.20.
8. बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा, वर्धा शिक्षा परिषद्, 1937 और जाकिर हुसैन समिति का विवरण, हिन्दुस्तानी तालीमी संघ, सेवाग्राम, वर्धा, 1957, पृ. 21.
9. वही, पृ. 149.
10. सैयदैन, ख्वाजा गुलाम, भारतीय शैक्षणिक विचारधारा, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, 1975, पृ.139.
11. बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा, वर्धा शिक्षा परिषद् 1937 और जाकिर हुसैन समिति का विवरण, हिन्दुस्तानी तालीमी संघ सेवाग्राम, वर्धा, 1957, पृ. 117.
12. वही, पृ. 18.19.
13. कुमार, कृष्ण, गुलामी की शिक्षा और राष्ट्रवाद, ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, पृ.200.
14. आचार्य परमेश, देशज शिक्षा, औपनिवेशिक विरासत और जातीय विकल्प, ग्रन्थ शिल्पी, 2010 पृ.171.
15. वही, पृ. 171.
16. वही, पृ. 172.
17. वही, पृ. 172.
18. वही, पृ. 165.
19. वही, पृ. 165.
20. कुमार, कृष्ण, शैक्षिक ज्ञान और वर्चस्व, ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, 2013, पृ. 44.
21. कुमार, कृष्ण, गुलामी की शिक्षा और राष्ट्रवाद, ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, पृ. 209.
22. वही, पृ. 194.
23. वही, पृ. 194.
24. कुमार, कृष्ण राज, समाज और शिक्षा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 147.
25. सरकार सुमित, आधुनिक भारत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,2004,पृ. 377.78.
26. कुमार, कृष्ण, शैक्षिक ज्ञान और वर्चस्व, ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, 2013, पृ. 20.